May 2014 IJRSS Volume 4, Issue 2 ISSN: 2249-2496

मिथिला में ग्रामीण हाट एवं मेला की प्रासंगिकता

अमरजी कुमार
शोधार्थी
स्नातकोत्तर इतिहास विभाग
ल0 ना0 मि0 विश्वविद्यालय,
कामेश्वरनगर, दरभंगा

मिथिला में हाट और मेला कोई नयी संस्था नहीं हैं। अति प्राचीन काल से ऐसी व्यवस्था आ रही है। यह एक ऐसी व्यवस्था थी जहाँ लोग सप्ताह में एक दिन या महीने मे एक दिन और वार्षिक भी होता था जिसमें एक दूसरे से मिलते थे। यह हाट या मेला गाँव के सामाजिक जीवन का प्रमुख अंग था। ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन काल में यह पुरानी संस्था पूर्ववत् चली आ रही थी। यहाँ लोग हजार से दस हजार तक एकत्रित होते थे। जो वार्षिक मेला था वह दो दिन, तीन दिन और महीने भर भी लगते थे।

सर्वप्रथम हाट पर विचार प्रस्तुत किया जाता है। हाट प्रत्येक सप्ताह में एक दिन लगता था। इसका दिन निश्चित रहता था या तो शुक्र के दिन या रविवार के दिन लगता था। मंगल के दिन भी हाट लगता था। प्रत्येक क्षेत्र में वहाँ के आवश्यकताओं के अनुसार पूर्व समय में निश्चित किया गया था और वह पूर्ववत् ही चल रहा था। हाट केवल एक दिन के लिये लगता था। सुबह में प्रारंभ होता था और शाम में सूर्य अस्त होने के पहले समाप्त हो जाता था। इसमें पुरूष, स्त्री, बच्चे सभी आते थे। प्रत्येक व्यक्ति को कुछ न कुछ आवश्यकता रहती और उसे खरीदने के लिये आते थे। यह गाँव के अलग ऐसे स्थान पर लगता था जहाँ सड़क हो, यातायात की सुविधा हो, पानी की व्यवस्था हो, ऊँची टीला हो अर्थात ऊँचा स्थान हो। वहाँ का भूखण्ड कम से कम दो–तीन एकड़ में हो।

यहाँ दूर–दूर से व्यापारी, सेठ, साहूकार, आते थे। वे चावल, दाल, आंटा, तेल, तेलहन का अनाज, मक्का, मरूआ, खेसारी, अरहर, बदाम और भी तरह–तरह के अनाज लाते थे। व्यापारी, कम मुनाफा लेकर ही बेचते थे ताकि दूसरे सप्ताह में भी ग्राहक उनके दुकान पर पहुँच सके। जो अधिक मुनाफा लेते उनके दूकान पर लोग नहीं जाते थे। उन्हें घाटा का सामना करना पड़ता था। गाँव के गरीब लोग अधिक जमा होते थे। साधारणतया मजदूर और उनके पत्नी वहाँ आते थे। व्यापारियों का भी एक खानदानी पेशा था अर्थात पिता के बाद उनका लड़का या पोता ही आते थे और गाँव के लोग उन्हें पहचानते थे और उन्हीं के दुकान में खरीद करते थे।

प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक परिवार को प्रत्येक सप्ताह के लिये कुछ न कुछ सामान खरीदना ही पड़ता था। कंपनी शासन काल में शहर भी तो कम थे और शहर जाने के लिये बैलगाड़ी के सवारी पर ही जाना पड़ता था। प्रति सप्ताह शहर जाना असंभव था। शादी व्याह के अवसर पर ही लोग सामान खरीदने के लिये शहर के बाजार में जाते थे।

हाट में कपड़ा का भी दूकान रहता था धोती, साड़ी, गमछा, चादर, कमीज के कपड़े पैजामा के कपड़े, पैन्ट के कपड़े आदि वस्त्र मिल जाते थे। शहर में कुछ अधिक मूल्य अवश्य लगता था किन्तु

उसके सिवा और तो कोई रास्ता नहीं था। गरीब आदमी कम कीमत में धोती, सारी, ब्लाउज, समीज, आदि खरीदते थे। वहाँ दरजी लोग भी रहते थे जो विभिन्न प्रकार के कपड़े सीते थे और सस्ते मूल्य पर तैयार कर देते थे।

हाट में तरह–तरह के सब्जियाँ भी मिलती थी और वह सस्ते मूल्य पर मिल जाते थे। सब्जियाँ ताजी होती थी क्योंकि लोग अगल–बगल से ही खरीदकर लाते थे। मांस, मछली भी मिल जाते थे और उस समय में हाट को छोड़कर और कहीं मिल भी नहीं सकता था। एक अंग्रेज प्लान्टर जो देहातों में अपना बंगला बनाकर रहते थे लिखा है कि "यह एक अनोखी संस्था है जो सूदूर देहातों (गाँवों) में रहने वालों के लिये हर सुविधा की चीजें मिल जाती है।"[1]

यद्यपि यहाँ मनोरंजन के भी साधन जुटाये जाते थे। लोग पूर्व बेला में ढ़ोल, तबला, हारमोनिया और अन्य गाने बजाने के समान लाकर किर्तन भजन और नाच की व्यवस्था करते थे। गाँव के बच्चे मिठाई भी खाते थे और नाच (डान्स) देखते थे। खासकर इस हाट के दिन एक बहुरूपिया अर्थात अपना बारह रूप दिखाने वाला आता था और तरह–तरह के प्रहसन दिखलाते थे। लोग खुश होकर उस व्यक्ति को एक पैसा दो पैसा दे देता था। मदारी अपना बंदर लेकर आते थे और अपना खेल दिखाते थे। वह भी भर दिन में एक रूपया कमा लेता था और एक सप्ताह का भोजन जुटा लेता था।

गाँव के बड़े–बड़े जमींदार भी हाट पर आते थे और अपने परिवार के खर्च के लिये नमक, तेल वैगरह खरीदते थे। कुछ दकियानुसी स्वभाव के जमींदार या धनी लोग नहीं जाते थे क्योंकि उन्हें अपने प्रतिष्ठा का अधिक महत्त्व था। वे समझते थे यह गरीबों अर्थात कमजोर तबके के लोगों के लिये है। वहाँ सभी जाति के लोग जुटते थे और हाट में जात–पात का विचार नहीं रहता था जिसे उस जमानें में लोग छुआ–छूत कहते और नहीं जाते थे। खासकर मिथिला के पंडित उसे निम्न विचार से देखते थे। वह युग वैसा ही था।[2]

आज भी मिथिला में ऐसे अनेकों हाट हैं जिनका लम्बा इतिहास है। गाँवों में अभी तक बूढ़े लोग हाट के विषय में कहानी के रूप में कहते हैं। कुछ बूढ़े लोग तो ऐसा कहते हैं कि अमुक स्थान का हाट कब प्रारंभ हुआ इसके विषय में बताना कठिन है। आज भी यह प्राचीन संस्था जीवित है।

मिथिला में ईस्ट इंडिया कंपनी के शासनकाल में अनेकों मेला लगते थे। सीतामढ़ी में डूमरा के नजदीक एक वार्षिक मेला लगता था। यहाँ किसान लोग अधिक संख्या में एकत्रित होते थे और बैलगाड़ी, बैलगाड़ी का पहिया और अच्छे–अच्छे नस्ल के बैल खरीदते थे। यहाँ लकड़ी के अच्छे–अच्छे सामान जैसे– पलंग, कुर्सी, टेबुल और भी अच्छे फर्नीचर मिलते थे। यहाँ दूर–दूर से व्यापारी आते थे और अच्छे मुनाफा कमाकर जाते थे। अंग्रेज प्लान्टर जो देहातों में रहते थे वे भी वहाँ जाते थे और आवश्यक वस्तु खरीदते थे।[3] मिथिला में सीतामढ़ी अत्यन्त प्राचीन स्थान है। कभी यहाँ घोर जंगल था। यहाँ जानकी स्थान है जिसे हल, कर्षण, यज्ञ भूमि बतायी जाती है। अर्थात राजा जनक की पुत्री सीता का इसी स्थान पर उत्पत्ति हुयी थी।

दूसरा महत्त्वपूर्ण मेला सोनपुर में लगता था। हिन्दुस्तान के बड़े–बड़े मेले में सोनपुर का ऊँचा स्थान है जहाँ हिन्दुस्तान के प्रत्येक भाग से लोग आते थे। यह मेला कार्तिक पूर्णिमा के दिन से प्रारंभ होता है और एक महीने तक चलता था इस मेले में प्रायः समान रूप से लोगों की जमात रहता

है। यहाँ हिन्दु, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई और अन्य धर्म के मानने वाले भी आते है। यहाँ कोई धार्मिक प्रतिबन्ध नहीं है। यहाँ स्त्री, पुरूष बच्चे सभी आते है। यहाँ ईस्ट इंडिया शासन काल में सभी अंग्रेज आते थे और अपने ईच्छा के अनुसार समान खरीदते थे। यहाँ लोग अपना टेन्ट लेकर आते हैं और महीनों तक अपने टेन्ट में खाना भी बनाते और आराम करते थे। गरीब से गरीब और धनी से धनी लोग यहाँ पहुँचते थे और पूरी अवधि तक रहते थे।[4]

सोनपुर गंगा और गंडक के कोने में बसे हुये हैं। यहाँ तक कहावत है कि एक समय में एक हाथी नदी में स्नान कर रहा था जिसे एक घड़ियाल ने पकड़ लिया और लाख उपाय करने बाद भी जब घड़ियाल नहीं छोड़ा तो वह हाथी भगवान से प्रार्थना किया और स्वयं भगवान आकर उस हाथी की प्राण रक्षा किये। इसे हरिहर क्षेत्र भी कहा जाता है क्योंकि हरिहरनाथ महादेव और गज ग्राह का मंदिर है। कंपनी शासन काल में यह व्यापार का सबसे बड़ा केन्द्र माना जाता था।[5]

दूसरा व्यापार का केन्द्र था पूसा बाजार इस बाजार के नजदीक रविवार को एक हाट भी लगता था। इस हाट में हजारों लोग एकत्रित होते थे। अंग्रेजों ने यहाँ ईख अनुसंधान संस्थान की स्थापना क थी और आज भी यह कृषि अनुसंधान का केन्द्र है। अंग्रेजों ने यहाँ 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में घोड़े के पालन और प्रजनन का केन्द्र स्थापित किया था। यहाँ का बथुआ आम और पहारपुरी सिंदुरिया आम सम्पूर्ण भारतवर्ष में प्रसिद्ध है। दूर–दूर से व्यापारी इन आमों को खरीदने के लिये आते थे। संप्रति पूसा में ईख अनुसंधान संस्थान के साथ–साथ बिहार सरकार एवं भारत सरकार के कई प्रकार के कुषि सम्बन्धी शोध कार्य चल रहे थे।[6]

मिथिला का प्राचीन स्थान जनकपुर आज भी रामनवमी (चैत्र महीने) के दिन यहाँ एक विशाल मेला लगता है। कंपनी शासन काल से पहले मुगल काल में भी जनकपुर में मेला लगता था, अर्थात प्राचीन काल से ही यहाँ मेला का आयोजन होता रहता था। यहाँ भारत, नेपाल, तिब्बत, चीन और भी विदेशी लोग इस मेला में उपस्थित होते थे। यह स्थान रामजानकी के नाम पर प्रसिद्ध है। इस स्थान का वर्णन, रामायण, महाभारत में तो आता ही है महाकवि विद्यापति ने भी अपने ग्रन्थ भू–परिक्रमा में इस स्थान की महत्ता पर लिखे है। यह कंपनी शासन काल में भी व्यापार का केन्द्र था और आज भी है।[7]

मिथिला के पूर्वी भाग में श्रृंगीश्वर स्थान या सिंहेश्वर स्थान संप्रति मधेपुरा से छः मील उत्तर है। यहाँ सिंहेश्वर नाथ महादेव का मंदिर है। इस स्थान पर भी एक विराट मेला प्रतिवर्ष लगता है। यहाँ अधिकतर बैल का खरीद बिक्री का स्थान था और मवेशी भी यहाँ बिक्री हेतु आते थे। ईस्ट इंडिया कंपनी काल में सरकार की ओर से जो बैल खरीद होता था वह उसी स्थान से और पश्चिम में सीतामढ़ी से यहाँ लाखों की तायदाद में लोग जमा होते थे।[8]

मिथिला में और भी छोटे–छोटे वार्षिक मेला लगता था जो दो दिन या तीन दिन का होता था। सीतामढ़ी के नजदीक या सीमामढ़ी स्टेशन के नजदीक जानकी मंदिर हैं। वह पुरौना ग्राम में है। इस मंदिर के विषय में वृहद विष्णु पुरान में वर्णन आया है और 18वीं शताब्दी में पं0 श्री बाबूलाल झा और लेखक भी रामटहल दास ने अपने ग्रंथ मानस में इस स्थान का वर्णन किया है। यहाँ भी दो–तीन दिनों का मेला लगता है और दूर–दूर के व्यापारी ईस्ट इंडिया कंपनी शासन काल में यहाँ आते थे।[9]

कटरा बाजार, यह भी मुजफ्फरपुर जिले का एक प्रखण्ड है। यहाँ भी एक विशालगढ़ का ध्वंसावशेष है। ब्रिटिश शासनकाल में इसे आरक्षी आवास बनाया गया था। यह गढ़ लगभग 84 विद्या में है। वहाँ पर चामुण्डा देवी की मंदिर है। इस स्थान को चामुण्डा गढ़ भी कहा जाता है। इस गढ़ के निकट बहुत पूर्व में एक समुन्नत बाजार था। यहाँ कंपनी शासन काल में मेला लगता था और आज भी लगता है। यहाँ भी दूर–दूर से व्यापारी यहाँ व्यापार करने के लिये आते थे।[10]

दरभंगा जिला में रोसड़ा बाजार है जो ईस्ट इंडिया कंपनी शासन काल में एक मेला लगता था। यह व्यापार का मुख्य केन्द्र था। यहाँ विभिन्न प्रकार के अनाज, तेल, बीज, साल्टपीटर, कपड़ा और अन्य वस्तुओं की बिक्री होती थी। यहाँ दूर–दूर से व्यापारी अपना माल लेकर आते थे और बेचते थे। उन्हें किसी प्रकार के दिक्कतों का सामना यहाँ नहीं करना पड़ता था और महीनों तक अपना सामान बेचते रहते थे।[11]

हाट और मेलों से पहले क्षेत्रीय जमींदार को और जमीन मालिक को आमदनी होती थी। अगर किसी मंदिर परिसर में हाट लगता था तो वहाँ की आय मंदिर की होती थी। किन्तु बड़े–बड़े मेले की आय जमींदारों को ही मिलता था। जमींदार दुकानदारों को या सेठ साहूकारों की नापी कर उसे जमीन दिया जाता था। जो जितना वर्गफीट जमीन दूकान के लिये लेते थे उसी हिसाब से उन्हें बट्टी लगता था।[12]

गर्वनर जनरल इन काउन्सिल ने इसकी सूचना प्राप्त की कि इन हाट और मेलों से सरकार को अच्छी आय हो सकती हैं। सर्वप्रथम उन्होंने जिला कलक्टर को पत्र लिखा कि अपने क्षेत्र के हाट या मेले की आय का पता लगावें और सरकार को सूचित करें। जिला कलक्टर ने देशी ठेकेदारों से बात कर आय के सम्बन्ध में जानकारी हासिल किया और गवर्नर को लिख डाला। गवर्नर के काउन्सिल ने 1790 ई0 में रेगुलेशन पास किया कि गंज, हाट और मेले से कितने आमदनी हो सकते है। प्रत्येक क्षेत्र के लिये गवर्नमेन्ट ऑफिसर नियुक्त किया गया। उनका काम था गंज, हाट और मेले की सही आय का आँकड़ा लेकर ठेकेदार को प्रत्येक साल के लिए पट्टा सरकार से लेना होता था और सही समय पर सरकार का टैक्स जमा करना होता था। अगर ठेकेदार सही समय पर टैक्स नहीं जमा करते तो उन्हें कानून के दायरे में जाना पड़ता। उनपर मुकदमा चलाया जाता और सजा भी दी जाती थी।[13]

इस तरह गंज, हाट, मेले से ईस्ट इंडिया कंपनी की आय का एक और स्रोत मिल गया और अच्छी आय लगभग कई लाखों में होने लगी। अब जमींदार और जमीन के मालिक को पूर्ण आया का $^1/_4$ हिस्सा मिलता था। गंज, हाट और मेले पर जमींदारों का जो वर्चस्व था वह समाप्त हो गया। आज भी एसे स्थानों की आय सरकारी खजाने में ठेकेदारों द्वारा जमा किये जोते है।[14]

संदर्भ सूची :–

1. एच0 आर0 घोसाल, सम आसपेक्ट ऑफ इकोनोमिक हिस्ट्री ऑफ बंगाल, कलकत्ता 1962, पृ0– 103
2. पी0 एल0 नरसिंह, इनसाइक्लोपेडिया ऑफ बंगाल, बिहार एण्ड उड़ीसा, मद्रास 1962, पृ0– 42
3. एन0 ओल्ड प्लान्टर, द रेमीनीसेन्स ऑफ बिहार, कलकत्ता 1887, पृ0– 31
4. एन0 ओल्ड प्लान्टर, द रेमीनीसेन्स ऑफ बिहार, कलकत्ता 1887, पृ0– 75–76
5. डी0 आर0 एम0 – वाल्यूम – 62, 13 मार्च 1821
6. सर जॉन हॉलेट, बिहार, दि हार्ट ऑफ इण्डिया, कैम्ब्रीज 1946, पृ0– 106
7. आर्यावर्त, पटना, रविवार, दिनांक 25.08.68 पृ0– 9
8. राम प्रकाश शर्मा, मिथिला का इतिहास, दरभंगा 1979, पृ0– 484
9. जानकी उत्पत्ति महात्मा – पृ0– 26–28
10. उपेन्द्र ठाकुर, हिस्ट्री ऑफ मिथिला, दरभंगा, 1956, पृ0– 263
11. डब्लू0 डबलू0 हण्टर, एनेल्स ऑफ रूरल एण्ड बिहार, बंगाल, लंदन, 1877, पृ0– 66
12. डी0 आर0 एम0 – वाल्यूम – 8, 23 जून, 1790
13. डी0 आर0 एम0 – वाल्यूम – 8, 26 अप्रील, 1790
14. डी0 आर0 एम0 – वाल्यूम – 17, 18 जुलाई, 1817